* ओ३म् *

# वेदसुधा

घासीराम ।

विधुलादेवी व देवीदत्त पुस्तक माला का दूसरा मनका।

* ओ३म् *

# * वेद सुधा *

ईश्वर स्तुति प्रार्थनादि सम्बन्धी
१०० सुन्दर वेद मंत्रों का संग्रह
भाषार्थ सहित।

पं० देवीदत्त द्विवेदी टेम्प्रेंस प्रीचर
प्रदत्त धन से प्रकाशित।

प्रकाशक—

घासीराम एम. ए. एल-एल. बी.
एडवोकेट, मेरठ
अधिष्ठाता ट्रैक्ट विभाग
श्रीमती आर्य प्रतिनिधिसभा संयुक्त-प्रांत।

मुद्रक—

राजाराम शर्मा,
आर्यभास्कर प्रेस, आगरा।

प्रथम संस्करण २०००] सन् १९३१ [ मूल्य।)

हिसाब पं० देवीदत्त द्विवेदी व
श्रीमती विधुलादेवी निधि

३३२८≡)१० मूल धन
५०८≡)२ ब्याज १२।९।१९३० ई० तक

व्यय

१००) लागत "वैदिक धर्म क्यों ग्रहण करना चाहिये"।
२२५) के लगभग लागत इस ट्रैक्ट की
१६९।≡)४ एक तिहाई ब्याज मूलधन में जमा

४९४।≡)४

सूचना

यह ट्रैक्ट तथा श्रीमती आर्य प्रतिनिधि सभा संयुक्त-प्रान्त द्वारा प्रकाशित अन्य ट्रैक्ट व पुस्तक निम्नलिखित पते पर प्राप्त हो सकती हैं।

जयन्तीप्रसाद एजेंट सभा,
आर्य पुस्तकालय
सिपट बाज़ार, मेरठ शहर।

पं० देवीदत्त द्विवेदी टैम्पेरेंस प्रीचर

जिनके प्रदत्त धन के व्याज से यह ट्रैक्ट प्रकाशित हुआ है।

हिसाब पं० देवीदत्त द्विवेदी व
श्रीमती विधुलादेवी निधि

३३२८=)१० मूल धन
५०८=)२ ब्याज १२।९।१९३० ई० तक

व्यय

१००) लागत "वैदिक धर्म क्यों ग्रहण करना चाहिये"।
२२५) के लगभग लागत इस ट्रैक्ट की
१६९।=)४ एक तिहाई ब्याज मूलधन में जमा

४६४।=)४

## सूचना

यह ट्रैक्ट तथा श्रीमती आर्य प्रतिनिधि सभा संयुक्त-प्रान्त द्वारा प्रकाशित अन्य ट्रैक्ट व पुस्तक निम्नलिखित पते पर प्राप्त हो सकती हैं।

जयन्तीप्रसाद एजेंट सभा,
आर्य पुस्तकालय
सिपट बाजार, मेरठ शहर।
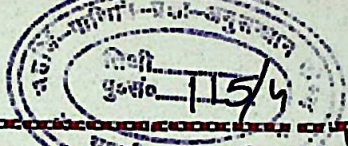
पं० देवीदत्त द्विवेदी टैम्पेरेंस प्रीचर
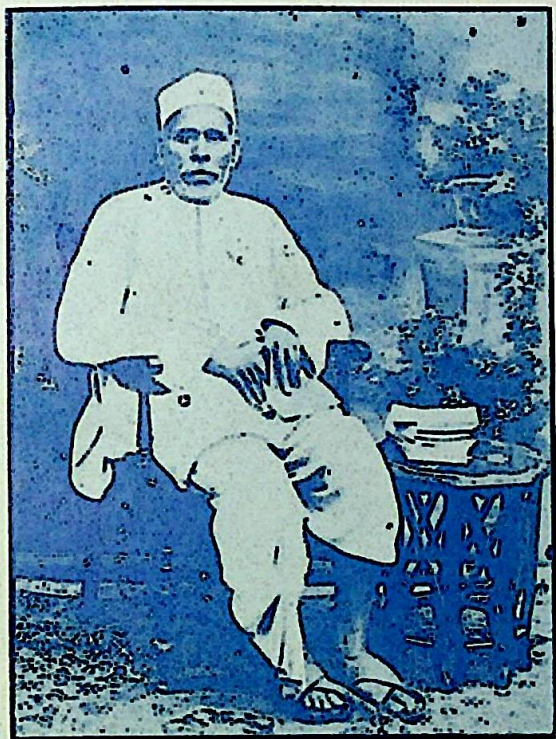
जिनके प्रदत्त धन के व्याज से यह ट्रैक्ट प्रकाशित हुआ है।

# ❁ भूमिका ❁

यह १०० वेद मन्त्रों का संग्रह ईश्वर भक्तों के नित्य पाठ और मनन करने के लिए प्रकाशित किया जाता है। हर एक मन्त्र का अति सुगम भावार्थ दे दिया गया है जिससे सर्व साधारण लाभ उठा सकें। इस संग्रह में चार प्रकरण हैं—१—प्रार्थना, २-स्तुति. ३—नमस्कार, ४—ईश्वरोपदेश। इस गुटके को भक्त जन हर समय पास रख सकते हैं और प्रभु की पवित्र कल्याणी वाणी के पाठ से आनन्द और पुण्य प्राप्त कर सकते हैं. परिवारों में नित्य पाठ के लिए इसका उपयोग किया जा सकता है, मित्रों को भेंट में दिया जा सकता है. विद्यार्थियों को पुरस्कार में

दिया जा सकता है। यदि आर्य जनता ने इसका समुचित आदर किया तो आगे को भी इसी प्रकार का संग्रह प्रकाशित किया जायगा। इस संग्रह में मुझे श्री पं० विद्यासागरजी विद्यालङ्कार, महोपाध्याय तथा श्री पं० शङ्करदेवजी पाठक मुख्याध्यापक गुरुकुल विश्वविद्यालय वृन्दावन से अमूल्य सहायता प्राप्त हुई है जिसके लिए मैं उनका अत्यन्त आभारी हूँ। यदि अर्थों में कोई त्रुटि पाई जाय तो उसका समस्त उत्तरदायित्व मुझ पर है, श्रीमती आर्यप्रतिनिधि सभा उसके लिए उत्तरदात्री नहीं है।

मेरठ ५।१२।३१

प्रकाशक—
घासीराम

ओ३म्

# अथ प्रार्थना प्रकरणम्

इन्द्र क्रतुं न आ भर पिता पुत्रे-
भ्यो यथा। शिक्षा णोऽस्मिन् पुरुहूत
यामिनि जीवा ज्योतिरशीमहि ॥
ऋ० ७।३२।२६

हे इन्द्र! जिस प्रकार पिता पुत्र को ज्ञान देता है, उसी प्रकार तू हमें ज्ञान दे। इस अंधकार (संसार) में हमें शिक्षा दे जिससे हम जीवन और प्रकाश को प्राप्त करें॥ १॥

शृणुतं जरितुर्हवमिन्द्राग्नी वनतं गिरः । ईशाना पिप्यतं धियः ॥

ऋ० ७।९४।२

---

हे इन्द्र ! ( परमैश्वर्यवन् ), हे अग्ने ! ( ज्योतिः स्वरूप ) परमेश्वर ! मुझ स्तुति करने वाले के वचन सुनो, प्रार्थना को स्वीकार करो । हे शासक ! हमारी बुद्धि को परिपक्व और पूर्ण करो ॥ २ ॥

* * *

मा पापत्वाय नो नरेन्द्राग्नी माभिशस्तये। मा नो रीरधतं निदे ॥

ऋ० ७।६४।३

—※—

हे मनुष्यों के नेता! हे इन्द्र! हे अग्ने! हमें पापों की ओर न जाने दीजिए, हमें दुष्कर्मों, और निन्दित कामों की ओर न जाने दीजिए ॥ ३ ॥

※ ※ ※

मा भूम निष्ट्या इवेन्द्र त्वदरणा इव । वनानि न प्रजहितान्यद्रिवो दुरोषासो अमन्महि ॥

ऋ० ८।१।१३

---

हे इन्द्र ! नीच पुरुषों के समान हम तुमसे दूर न हों और न पराये पुरुषों के समान हों । हे दुष्टों के नाशक ! हम शाखा-रहित वृक्षों के समान (अर्थात् सन्तानहीन) न होवें ॥ ४ ॥

* * *

त्वं नः पश्चादधरादुत्तरात् पुर
इन्द्र निपाहि विश्वतः । आरेऽस्मत्कृ-
णुहि दैव्यं भयमारे हेतीरदेवीः ।
ऋ० ८।५०(६१)१६

हे इन्द्र ! तू हमारी पीछे, नीचे, ऊपर, सामने की ओर से, ( अर्थात् सब ओर से ) रक्षा कर । हमसे आधिदैविक भयों को दूर कर, और आधिदैविक के अति-रिक्त अन्य दुःखों को भी दूर कर ॥ ५ ॥

मा न इन्द्र पराट्टणग्भवा नः सधमाद्यः । त्वं न ऊती त्वमिन्न आप्यं मा न इन्द्र पराट्टणक् ॥

ऋ० ८।८६(९७)७

हे इन्द्र ! तू हमारा त्याग न कर, तू हमें एक साथ आनन्द देने वाला हो। हे इन्द्र ! तू ही हमारा रक्षा (का आश्रय) और तू ही हमारा प्रार्थनीय है, अतः तू हमारा त्याग न कर ॥ ६ ॥

त्वं हि नः पिता वसो त्वं माता शतक्रतो बभूविथ । अधा ते सुम्नमीमहे ॥

ऋ० ८।८७(९८)११

—— * ——

हे सबको अपने में बसाने वाले, हे अनन्त पराक्रमयुक्त भगवन् तू ही हमारा पिता और तू ही हमारी माता है, इसलिए हम तुझसे ही सुख की याचना करते हैं ॥ ७ ॥

त्वां शुष्मिन् पुरुहूत वाजयन्त-मुपब्रुवे शतक्रतो । स नो रास्व सुवीर्यम् ॥

ऋ० ८।८८(९८)१२

---

हे बलशालिन् ! हे अत्यन्त प्रार्थनीय ! हे अनन्त पराक्रमशील प्रभो ! हम तुझ बल से प्यार करने वाले से प्रार्थना करते हैं कि हमें उत्तम बल दे ॥ ८ ॥

* * *

इमं मे वरुण श्रुधी हवमद्या च मृळय । त्वामवस्युराचके ॥

ऋ० १।२५।१९.

—※—

हे वरणीय परमेश्वर ! मेरे इस वचन को सुन और आज ही (विना विलंब के) मुझे सुखी कर। मैं अपनी रक्षा चाहता हुआ तुझसे प्रार्थना करता हूँ ॥ ६ ॥

* * *

अग्ने त्वं पारया नव्यो अस्मा-
न्त्स्वस्तिभिरति दुर्गाणि विश्वा ।
पूश्च पृथ्वी बहुला न उर्वी भवा
तोकाय तनयाय शं योः ॥

ऋ० १।१८९।२

———※———

हे सबके नेता अग्ने ! हमें अपने नये
नये कल्याणकारक आशीर्वादों के द्वारा
सब अत्यन्त दुःसह कष्टों से पार कर।
हमारे नगर बड़े हों, हमारी भूमि उपजाऊ
हो, हमारे पुत्र पौत्रों में सुख और शान्ति
रहे ॥ १० ॥

* * *

अग्निर्मा गोप्ता परिपातु विश्वत
उद्यन्त्सूर्यो नुदतां मृत्युपाशान् ।
व्युच्छन्तीरुषसः पर्वता ध्रुवाः सहस्रं
प्राणा मय्यायतन्ताम् ।

अथर्व० १७।१।३०

—※—

प्रकाश स्वरूप परमेश्वर मेरा रक्षक है, वह मेरी सब ओर से रक्षा करे, उदय होता हुआ सूर्य मृत्यु के जाल को दूर करे, प्रकाशमय उषाएँ, न चलायमान होने वाले पर्वत मुझे अपरिमित प्राणशक्ति से युक्त करें* ॥ ११ ॥

---

* सूर्य की किरणें, पर्वतों का शुद्ध जल, वायु और सुन्दर प्राकृतिक दृश्य, प्रातःकाल का खुले मैदान का स्वच्छ वायु स्वास्थ्य के लिए अत्यन्त लाभदायक हैं, उनसे प्राणशक्ति बढ़ती और जीवन दीर्घ और सुखमय होता है ।

प्रियं मा कृणु देवेषु प्रियं राजसु मा कृणु । प्रियं सर्वस्य पश्यत उत शूद्र उतार्ये ॥

अथर्व० १९।६२।१

—*—

हे भगवन् ! मुझे विद्वानों का प्यारा बना, मुझे राजाओं (शासकों, वीर पुरुषों) का प्यारा बना, मुझे सब देखने वालों (प्राणियों) का और शूद्रों का और वैश्यों (प्रजा) का प्यारा बना ॥ १२ ॥

* * *
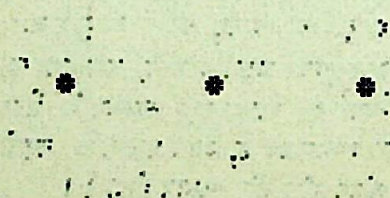
रुचं नो धेहि ब्राह्मणेषु रुचꣳ
राजसु नस्कृधि । रुचं विश्येषु शूद्रेषु
मीय धेहि रुचा रुचम् ॥

यजु० १८।४८

—※—

हे भगवन् ! हमारे ब्राह्मणों में तेज दे, हमारे क्षत्रियों में तेज दे, वैश्यों में तथा शूद्रों में तेज दे, मुझमें अतिशय तेज धारण करा ॥ १३ ॥

* * *

तनूपाऽअग्नेऽसि तन्वम्मे पाह्या-
युर्दाऽअग्नेऽस्यायुर्मे देहि । वर्चोदा
अग्नेऽसि वर्चो मे देहि । अग्ने यन्मे
तन्वाऽऊनं तन्मऽआपृण ॥

यजु० ३।१७

---

हे अग्ने ! तू शरीरों की रक्षा करने
वाला है, मेरे शरीर की रक्षा कर, हे
अग्ने ! तू आयु का देने वाला है, मुझे
आयु दे, हे अग्ने ! तू तेज का देने वाला है
मुझे तेज दे, हे अग्ने ! मेरे शरीर में जो
न्यूनता है उसे पूरी कर ॥ १४ ॥

* * *

तेजोऽसि तेजो मयि धेहि। वीर्य्यमसि वीर्य्यम्मयि धेहि। बलमसि बलम्मयि धेहि। ओजोऽस्योजो मयि धेहि। मन्युरसि मन्युम्मयि धेहि। सहोऽसि सहो मयि धेहि॥

यजु० १९।९

हे परमेश्वर! तू तेज है मुझमें तेज धारण कर, तू वीर्य (पराक्रम) है मुझमें वीर्य धारण कर, तू बल है मुझमें बल धारण कर, तू ओज है मुझमें ओज धारण कर, तू मन्यु (दुष्टों पर क्रोध करने वाला) है मुझमें मन्यु धारण कर, तू सहनशील है मुझमें सहनशीलता धारण कर॥ १५॥

भूर्भुवः स्वः सुप्रजाः प्रजाभिः स्याꣳसुवीरो वीरैः सुपोषः पोषैः। नर्य प्रजाम्मे पाहि शꣳस्य पशून्मे पाह्यथर्य पितुम्मे पाहि ॥

यजु० ३।३७

हे प्राणों के प्राण! हे जगत् के पालक! हे सुखस्वरूप भगवन्! मैं उत्तम सन्तान से सन्तान वाला होऊँ, वीरों से उत्तम वीरवान्, पुष्ट करने वाले पदार्थों से उत्तम पुष्टिकारक पदार्थ वाला होऊं। हे मनुष्यों के हित करने वाले! मेरी प्रजा की रक्षा कर, हे प्रशंसा के योग्य! मेरे पशुओं की रक्षा कर, हे ज्ञानशील! मेरे अन्न की रक्षा कर ॥१६॥

बलं धेहि तनूषु नो बलमिन्द्रा-
नडुत्सु नः । बलं तोकाय तनयाय
जीवसे त्वं हि बलदा असि ॥

ऋ० ३ । ५३ । १८

——*——

हे इन्द्र ! हमारे शरीरों में बल धारण
कर, हमारे बैलों को बलवान् कर।
हमारे पुत्रों पौत्रों को बल दे कि वह
(सुख से) जीवें, तू ही बल देने वाला
है ॥१७॥

दृते दृꣳह मा मित्रस्य मा चक्षुषा सर्वाणि भूतानि समीक्षन्ताम् । मित्रस्याहं चक्षुषा सर्वाणि भूतानि समीक्षे। मित्रस्य चक्षुषा समीक्षामहे॥

यजुः ३६ । १८

हे अज्ञान के नाशक ! मुझे ( ज्ञान में ) दृढ़ कर, मुझे सारे प्राणी मित्र की आँखों से देखें, मैं सारे प्राणियों को मित्र की आँखों से देखूँ, हम सब ( एक दूसरे को ) मित्र की आँखों से देखें ॥ १८ ॥

* * *

वाङ् म आसन्नसोः प्राणश्चक्षुरक्ष्णोः श्रोत्रं कर्णयोः । अपलिताः केशा अशोणा दन्ता बहु बाह्वोर्बलम् ॥
अथर्व० १९ । ६० । १

हे प्रभो ! मेरे मुख में वाणी, नथनों में प्राण, आँखों में दृष्टि, कानों में सुनने की शक्ति हो । बाल सफेद न हों, दाँत लाल व काले न हों ( अर्थात् श्वेत रहें ) भुजाओं में बहुत बल हो ॥१९॥

* * *

ऊर्वोरोजो जङ्घयोर्जवः पादयोः ।
प्रतिष्ठा अरिष्टानि मे सर्वात्मानिभृष्टः ॥
अथर्व० १९ । ६० । २

---

हे प्रभो ! (मेरी) रानों में बल, टाँगों में वेग, पैरों में खड़े होने की शक्ति, मेरे सब अंग पीड़ा रहित और आत्मा नीचे न गिरने वाला हो ॥२०॥

* * *

अद्याद्या श्वः श्व इन्द्र त्रास्व परे च नः । विश्वा च नो जरितॄन्त्सत्पते अहा दिवा नक्तं च रक्षिषः ॥

ऋ० ८ । ५० (६१) १७

—*—

हे इन्द्र ! प्रत्येक आज के दिन, प्रत्येक आने वाले ( कल के ) दिन और उस से अगले ( परसों के ) दिन हमारी रक्षा कर । हे सज्जनों के पालक ! हम में जो तेरी स्तुति करने वाले हैं उन सब की प्रति दिन, रात दिन रक्षा कर ॥२१॥

* * *

यत इन्द्र भयामहे ततो नो अभयं कृधि । मघवञ्छग्धि तव तन्न ऊतिभिर्वि द्विषो वि मृधो जहि ॥

ऋ० ८ । ५० (६१) १३

हे इन्द्र ! जिस स्थान से हम भय करते हैं उस स्थान से हमें अभय कर । हमारी सहायता कर, अपनी रक्षाओं के द्वारा हमसे द्वेष करने वालों को हमारे शत्रुओं को दूर कर ॥२२॥

* * *

अपामीवामप स्त्रिधमप सेधत दुर्मतिम् । आदित्यासो युयोतना नो अंहसः ॥

ऋ० ८ । १८ । १०

—✻—

हे सब विद्याओं के ज्ञाता परमात्मन्! सब रोगों को दूर कर, शुभ कर्मों के बाधक दुष्टबुद्धि वाले मनुष्यों को दूर कर, हमें पापों से दूर रख ॥२३॥

* * *

प्र सो अग्ने तवोतिभिः सुवीराभिस्तिरते वाजभर्मभिः । यस्य त्वं सख्यमावरः ॥

ऋ० ८ । १९ । ३०

---

हे अग्ने ! वह मनुष्य जिसकी मित्रता तू स्वीकार करता है तेरी अत्यन्त बल वीर्य युक्त रक्षाओं की सहायता से आपत्तियों को तर जाता है ॥२४॥

* * *

अग्न आयूंषि पवसे आ सुवोर्ज-
मिषं च नः। आरे बाधस्व दुच्छुनाम्॥
साम० उत्तरार्चि० प्रपा० ६ अर्द्धप्रपा०
३। मं० १२

---

हे अग्ने! हमारी आयु को पवित्र कर, हमें बल और अन्न दे, जो पापी मनुष्य हैं उन्हें हम से दूर रख॥२५॥

* * *

उदुत्तमं मुमुग्धि नो विपाशं
मध्यमं चृत । अवाधमानि जीवसे ॥
ऋ० १।२५।२१

———*———

हे वरणीय भगवन् ! हमें ऊपर के वीच के और नीचे के ( लोकैषणा, पुत्रैषणा, वित्तैषणा रूपी ) जालों से छुड़ाइये ताकि हम ( सुख पूर्वक ) जी सकें ॥२६॥

* * *

वयं घा ते त्वे इद्विन्द्र विप्रा अपि ष्मसि । न हि त्वद॒न्यः पुरुहूत कश्चन मघवन्नस्ति मर्डिता ॥

ऋ० ८।५५ (६६) १३

—※—

हे इन्द्र ! हम तेरे हैं, हम उपासक जनों का तू ही आश्रय है, हे परम बल शालिन् ! बहुतों से प्रशंसा किये जाने के योग्य ! हमें सुख देने वाला तेरे अतिरिक्त और कोई नहीं है ॥२७॥

* * *

त्वं नो अस्या अमतेरुत क्षुधोऽ-
भिशस्तेरव स्पृधि । त्वं न ऊती तव
चित्रया धिया शिक्षा शचिष्ठ
गातुवित् ॥

ऋ० ८।४५ (६६) १४

---

हे भगवन् ! हमें तू इस दुर्बुद्धि और
भिक्षावृत्ति के निन्दित कर्म से बचा । तू
ही हमारा रक्षक है, अपने विचित्र ज्ञान
से हमें युक्त कर, हे परम बल शालिन् !
तू सन्मार्ग का ज्ञाता है ॥२८॥

* * *

यतो यतः समीहसे ततो नो ऽअभयं कुरु। शं नः कुरु प्रजाभ्यो ऽभयं नः पशुभ्यः॥

यजुः ३६।२२

—*—

हे परमेश्वर! जिस २ स्थान से तू सम्यक् चेष्टा करता है उस २ स्थान से हमें अभय कर। हमारी सन्तान सुखी रहे, हमें पशुओं से भय न हो॥२६॥

* * *

त्वामग्ने मनीषिणस्त्वां हिन्वन्ति
चित्तिभिः। त्वां वर्धन्तु नो गिरः॥

ऋ० ८।४४।१९

---

हे अग्ने! तुझे विद्वान् लोग भक्ति से प्रसन्न करते हैं। हमारी वाणियाँ (स्तुति) तेरे यश का विस्तार करें॥ ३०॥

* * *

प्रातरग्निं प्रातरिन्द्रं हवामहे
प्रातर्मित्रावरुणा प्रातरश्विना ।
प्रातर्भगं पूषणं ब्रह्मणस्पतिं प्रातः
सोममुत रुद्रं हुवेम् ॥

ऋ० ७।४१।१

हम प्रातःकाल अग्नि (प्रकाशस्वरूप) इन्द्र ( परमैश्वर्यवान् ), मित्र ( सबके सुहृत ), वरुण (सबके वरण, प्रेम करने योग्य), अश्वी (सबमें श्रेष्ठ नायक) परमेश्वर की प्रार्थना करते हैं । हम प्रातःकाल भग ( सत्य और सौन्दर्य के आधार, भजनीय ), पूषण (सबके पालन-पोषण कर्त्ता), ब्रह्मणस्पति ( वेद-संपूर्ण ज्ञान के स्वामी ), सोम ( सुख और शान्ति के दाता) और रुद्र (दुष्टों को रुलाने वाले ) की आराधना करते हैं ॥ ३१ ॥

प्रातर्जितं भगमुग्रं हुवेम वयं पुत्रमदितेर्यो विधर्ता । आध्रश्चिद्यं मन्यमानस्तुरश्चिद्राजा चिद्यं भगं भक्षीत्याह ॥

ऋ० ७।४१।२

---

हम जयशील, अत्यन्त बलशाली, भजनीय परमात्मा की प्रातःकाल में प्रार्थना करते हैं जो अन्तरिक्ष के पुत्र ( सूर्यादि ) को धारण कर रहा है, जिस भजनीय परमेश्वर की प्राप्ति की दरिद्र दीन मनुष्य तथा धनी ऐश्वर्यशाली लोग कामना करते हैं ॥ ३२ ॥

भग प्रणेतर्भग सत्यराधो भगेमां
धियमुद वा ददन्तः । भग प्रणो जनय
गोभिरश्वैर्भगप्र नृभिर्नृ वन्तः स्याम ॥

ऋ० ७।४१।३

---

हे भजनीय ! सबके नेता ! तेरा दान
सदा सत्य होता है, हे भजनीय ! इस
हमारे स्तोत्र ( प्रार्थना ) को रक्षा कर
और हमें धन दे । हे भजनीय ! हमें बहुत
सी गौ और घोड़े दे, हे भजनीय ! हम
वीर और श्रेष्ठ पुरुषों वाले हों ॥ ३३ ॥

* * *

उतेदानीं भगवन्तः स्यामोत प्रपित्व उत मध्ये अह्नाम् । उतोदिता मघवन्त्सूर्यस्य वयं देवानां सुमतौ स्याम ॥

ऋ० ७।४१।४

—*—

और इस समय ( प्रातःकाल ) हम ऐश्वर्ययुक्त हों तथा सायंकाल और दिन के मध्य में । हे मघवन ! ( धन और ऐश्वर्य के दाता ) सूर्य के उदय होने के समय हम विद्वानों की उत्तम बुद्धि में वर्तमान रहें* ॥ ३४ ॥

* प्रातःकाल विशेषतः ईश्वरोपासना, देवयज्ञ और स्वाध्याय का है—अर्थात् शुभकर्म और विद्वानों के सत्संग का ।

भग एव भगवाँ अस्तु देवास्तेन वयं भगवन्तः स्याम । तं त्वा भग सर्व इज्जोहवीति स नो भग पुर एता भवेह ॥

ऋ० ८।४१।५

वह भजनीय परमेश्वर ही सब ऐश्वर्यों का स्वामी है, हम उसी (की कृपा) से ऐश्वर्य प्राप्त करते हैं। हे भजनीय, ऐश्वर्य के दाता परमेश्वर! सब विद्वान् तेरी ही स्तुति प्रार्थना करते हैं, हे भगवन्! इस संसार में तू हमारा अग्रणी हो ॥३५॥

* * *

पुरा अग्ने दुरितेभ्यः पुरा मृध्रेभ्य कवे। प्र ण आयुर्वसो तिर ॥

ऋ० ८।४४।३०

---

हे अग्ने ! (ज्ञान और प्रकाश स्वरूप), हे कवे ! (सबको जानने और देखने वाले) हमें पापों से और शत्रुओं से बचा। हे वसो ! ( सर्व व्यापक ) हमारे जीवन को दीर्घ कर ॥ ३६ ॥

* * *

स्वस्ति नो दिवोऽग्ने पृथिव्या विश्वायुर्धेहि यजथाय देव। सचेमहि तव दस्म प्रकेतैरुरुष्या ण उरुभिर्देव शंसैः ॥

ऋ० १०।७।१

हे देव! (प्रकाशस्वरूप आनन्दमय) हमें द्यु लोक और पृथ्वी से सुख प्राप्त हो, हे देव! हमें यज्ञ कर्म करने के लिए पूरी आयु दे। हे पापनाशक! हम तेरे ज्ञान का सेवन करें, हे देव! हे अद्भुत कर्म करने वाले! अपनी विस्तृत कृपाओं से हमारी रक्षा कर ॥ ३७ ॥

* * *

भवा नोऽग्नेऽवितोत गोपा भवा वयस्कृदुत नो वयोधाः। रास्वा च नः सुमहो हव्य दातिं त्रास्वोत नस्तन्वोऽअप्रयुच्छन् ॥

ऋ० १०।७।७

—*—

हे अग्ने ! तू हमारा रक्षक और बचाने वाला हो, हमें आयु का और बल वीर्य का देने वाला हो। हे अत्यन्त महत्वशालिन् ! तू हमारी हवि (श्रद्धा भक्ति) को स्वीकार कर, और हमारे शरीरों की निरन्तर रक्षा कर ॥ ३८ ॥

* * *

परं मृत्यो अनु परेहि पन्थां यस्ते स्व इतरो देवयानात् । चक्षुष्मते शृण्वते ते ब्रवीमि मा नः प्रजां रीरिषो मोत वीरान् ॥

ऋ० १०।१८।१

—※—

हे मृत्यो ! (जगत् के संहारकर्त्ता) जो देवताओं (विद्वानों) के मार्ग से तेरा अपना दूसरा मार्ग है उससे हमें परे रख। तू सब कुछ देखने और सुनने वाला है, मैं तुझ से याचना करता हूं कि हमारी सन्तान और वीरों को कष्ट मत दे*॥३९॥

*देवयान मोक्ष का मार्ग है। दूसरा मार्ग वह है जिस पर चलने से मनुष्य जन्म मरण के चक्कर में फंसता है।

आराच्छत्रुमप वाधस्व दूरमुग्रो यः शम्वः पुरुहूत तेन । अस्मे धेहि यवमद्गोमदिन्द्र कृधी धियं जरित्रे वाजरत्नाम् ॥

ऋ० १०।४२।७

—— * ——

हे वहुतों से प्रार्थना किये जाने वाले प्रभो ! जो तेरी दुष्टों का ताड़न करने वाली शक्ति है उसके द्वारा हमारे शत्रुओं को हम से परे रख । हमें अन्न और पशु दे । अपने स्तोताओं ( उपासकों ) की वुद्धियों को बल और धन प्राप्त करने वाली बना ॥ ४० ॥

* * *

अग्ने नय सुपथा राये अस्मा-
न्विश्वानि देव वयुनानि विद्वान्।
युयोध्यस्मज्जुहुराणमेनो भूयिष्ठां ते
नम उक्तिं विधेम् ॥

ऋ० १।१८९।१

—※—

हे अग्ने ! हमें धन धान्य की प्राप्ति
के लिए अच्छे मार्ग से चला। हे देव !
तू हमारे सब कर्मों को जानता है। हमसे
कुटिल ( टेढ़े ) पापों को छुड़ा, हम तेरी
नमस्कार उक्तियों ( वचनों ) से बहुत
बहुत प्रार्थना करते हैं ॥ ४१ ॥

* * *

स नः पवस्व शङ्गवे शं जनाय शमर्वते । शं राजन्नोषधीभ्यः ॥

साम० उत्तरा० प्र० १ अर्द्ध प्र० १ मं० ३

—*—

हे महाराजाधिराज ! हमारे परिवार के मनुष्यों को स्वस्थ रख, गौवों और घोड़ों में शान्ति रख, ओषधियों में शान्ति रख ॥ ४२ ॥

*     *     *

स नो वन्धुर्जनिता स विधाता
धामानि वेद भुवनानि विश्वा ।
यत्र देवा अमृतमानशानास्तृतीये
धामन्नध्यैरयन्त ॥

यजु० ३२।१०

—*—

वह ( परमेश्वर ) हमारा वन्धु, उत्पन्न करने वाला और बनाने वाला है, वह सब लोकों, स्थानों, सामर्थ्यों, नामों और पदार्थों को जानता है। उस परमेश्वर में ही विद्वान् तीसरे धाम ( मोक्ष ) में आरूढ होकर अमरत्व का भोग करते हैं ॥ ४२ ॥

* * *

यज्जाग्रतो दूरमुदैति दैवं तदु सुप्तस्य तथैवैति। दूरङ्गमं ज्योतिषां ज्योतिरेकं तन्मे मनः शिवसङ्कल्पमस्तु ॥

यजु० ३४ । १

जो मन जागते हुए मनुष्य का दूर दूर जाता है और सोते हुए मनुष्य का भी वैसे ही दूर दूर जाता है, जो दिव्य गुणयुक्त, दूर जाने वाला, ज्योतियों (प्रकाशक पदार्थों) में एक ज्योति है (हे प्रभो!) वह मेरा मन शुभ, कल्याण-कारक विचारों वाला हो ॥४४॥

* * *

येन कर्माण्यपसो मनीषिणो यज्ञे कृण्वन्ति विदथेषु धीराः। यदपूर्वं यक्षन्तमः प्रजानां तन्मे मनः शिवसङ्कल्पमस्तु ॥

यजु० ३४।२

जिसके द्वारा विद्वान् लोग यज्ञ में कर्म करते हैं और वीर पुरुष युद्ध में कर्म करते हैं, जो प्राणियों के भीतर रहने वाला अपूर्व पूजनीय ( पदार्थ ) है, हे प्रभो! वह मेरा मन शुभ, कल्याणकारक विचारों वाला हो ॥४५॥

* * *

यत्प्रज्ञानमुत चेतो धृतिश्च यज्ज्योतिरन्तरमृतं प्रजासु। यस्मान्न ऋते किञ्चन कर्म क्रियते तन्मे मनः शिवसङ्कल्पमस्तु ॥

(यजु० ३४।३

---

जो उत्कृष्ट ज्ञान (का साधन) और चिन्तन शील (स्मरण शक्ति वाला), धैर्य (का स्रोत) है, जो मनुष्यों के भीतर नाशरहित प्रकाश है, हे प्रभो! वह मेरा मन शुभ, कल्याणकारक विचारों वाला हो ॥४६॥

* * *

येनेदं भूतं भुवनं भविष्यत्परि-
गृहीतममृतेन सर्वम् । येन यज्ञस्तायते
सप्त होता तन्मे मनः शिवसङ्कल्पमस्तु ॥
यजु० ३४।४

—✳—

जिस नाशरहित ने इस सब भूत, भविष्यत्, वर्तमान को ( योग साधन द्वारा ) ग्रहण कर रक्खा है, जिसके द्वारा सातों होता* ( इस जीवनरूपी ) यज्ञ का विस्तार करते हैं, हे प्रभो ! वह मेरा मन शुभ, कल्याणकारक विचारों वाला हो ॥४७॥

---

* पाँचों ज्ञानेन्द्रिय, बुद्धि और आत्मा ही सात होता हैं—स० प्र० पृ० २६३

यस्मिन्नृचः सामयजूꣳषि यस्मिन्
प्रतिष्ठिता रथनाभाविवाराः ।
यस्मिँश्चित्तꣳ सर्वमोतं प्रजानां
तन्मे मनः शिवसङ्कल्पमस्तु ॥

यजु० ३४।५

———*———

जिसमें ऋग्वेद, सामवेद, यजुर्वेद तथा अथर्ववेद रथ के पहिये की नाभि में अरों के समान जुड़े हुए हैं, जिसमें प्राणियों का सब ज्ञान ओत प्रोत ( पिरोया हुआ ) है, हे प्रभो ! वह मेरा मन शुभ, कल्याणकारक विचारों वाला हो ॥ ४८ ॥

* * *

सुषारथिरश्वानिव यन्मनुष्यान्नेनीयतेऽभीशुभिर्वाजिनऽइव । हृत्प्रतिष्ठं यदजिरं जविष्ठं तन्मे मनः शिवसङ्कल्पमस्तु ॥

यजु० ३४।६

——*——

जसे अच्छा सारथि रास के द्वारा घोड़ों को चलाता है ऐसे ही जो मन घोड़ों के समान मनुष्यों को चलाता है। जो हृदय में प्रतिष्ठित, जराग्रस्त न होने वाला और अत्यन्त वेग युक्त है, हे प्रभो वह मेरा मन शुभ, कल्याणकारक विचारों वाला हो ॥ ४९ ॥

* * *

अभयं नः करत्यन्तरिक्षमभयं द्यावापृथिवी उभे इमे । अभयं पश्चादभयं पुरस्तादुत्तरादधराद-भयं नो अस्तु ॥

अथर्व० १९।१५।५

—※—

हे अभयदाता भगवन् ! हमें अन्त-रिक्ष ( वायुमंडल ) से अभय कर, इन दोनों, द्युलोक और पृथ्वी से अभय कर, हमें पीछे की ओर से भय न हो, आगे की ओर से भय न हो, ऊपर की और नीचे की ओर से भय न हो ॥५०॥

※ ※ ※

अभयं मित्रादभयममित्रादभयं ज्ञातादभयं परोक्षात् । अभयं नक्तमभयं दिवा नः सर्वा आशा मम मित्रं भवन्तु ॥

अथर्व० १९।१५।६

---

हे अभयदाता भगवन् ! हमें मित्रों से अभय कर, शत्रुओं से अभय कर, जाने हुओं से अभय कर, न जाने हुओं से अभय कर । रात से अभय कर, दिन से अभय कर, सारी दिशाएं हमारी मित्र हों ॥५१॥

* * *

# अथ स्तुतिप्रकरणम्

---

अनुत्तमा ते मघवन्नकिर्नु न त्वावाँ अस्ति देवता विदानः। न जायमानो नशते न जातो यानि करिष्या कृणुहि प्रवृद्ध ॥

ऋ० १।१६५।९

---

हे पूजनीय परमेश्वर! निश्चय ही तुझ से कोई श्रेष्ठ नहीं है और न कोई विद्वान् वा अन्य दिव्यगुणयुक्त पदार्थ तुझ से अधिक प्रसिद्ध है। न कोई उत्पन्न होने वाला, न वह जो उत्पन्न हो चुका है तेरे समान है, हे सब से वृद्ध (बड़े) परमात्मन्! तू करने योग्य कार्यों को करता है ॥५२॥

पवित्रं ते विततं ब्रह्मणस्पते प्रभुर्गात्राणि पर्येषि विश्वतः । अतप्ततनूर्न तदामो अश्नुते शृतास इद्वहन्तस्तत्समाशते ॥

ऋ० ९।८३।१

—※—

हे ब्रह्माण्ड के स्वामी ! तुम्हारा पवित्र (स्वरूप) सब जगह व्यापक है, तू सामर्थ्यवान् है, तू सब शरीरों को सब ओर से घेरे हुए है जिसने अपने शरीर को तपाया नहीं है,* वह कच्चा है, वह तुझे प्राप्त नहीं हो सकता, जो पके हुए हैं वह वहन करते हुए उसे तेरे स्वरूप को पाते हैं ॥ ५३ ॥

*अर्थात् जिसने ब्रह्मचर्य्य, यम, नियमादि पालन द्वारा मन इन्द्रियों को वश में नहीं किया है ।

न त्वावाँ अन्यो दिव्यो न पार्थिवो न जातो न जनिष्यते। अश्वायन्तो मघवन्निन्द्र वाजिनो गव्यन्तस्त्वा हवामहे ॥

ऋ० ७।३२।२३

—※—

हे पूजनीय, हे परमैश्वर्यनन् परमेश्वर! कोई भी द्युलोक में और पृथ्वी पर ऐसा उत्पन्न नहीं हुआ और न उत्पन्न होगा जो तेरे समान हो। हम घोड़ों, अन्न, धन, बल और गौओं की कामना करने वाले तुझे बुलाते हैं (तेरी स्तुति, प्रार्थना करते हैं) ॥ ५४ ॥

* * *

विश्वतश्चक्षुरुत विश्वतो मुखो
विश्वतो बाहुरुत विश्वतस्पात् ।
सं बाहुभ्यां धमति सं पतत्रैर्द्यावा-
भूमी जनयन्देव एकः ॥

ऋ० १०।८१।३

---*---

उस (परमेश्वर) की आँखें सब ओर हैं, मुख सब ओर है, भुजाएं सब ओर हैं, पैर सब ओर हैं। वह एक परमात्मदेव द्युलोक और पृथ्वीलोक को उत्पन्न करता हुआ भुजाओं से और पक्षों (परों वा पंखों, सृष्टि सङ्कल्प रूप तेज) से (ब्रह्माण्ड को) तपाता है* ॥५५॥

---

* जैसे पक्षी अंडे को अपने परों से सेकर बच्चा निकालता है ऐसे ही परमात्मा के तप (तेज) से तपाए जाने पर सृष्टि उत्पन्न होती है।

हिरण्यगर्भः समवर्तताग्रे भूतस्य जातः पतिरेक आसीत् । स दाधार पृथिवीं द्यामुतेमां कस्मै देवाय हविषा विधेम ॥

ऋ० १०।१२१।१

—*—

वह परमात्मा जिसके गर्भ में सब प्रकाशमय पदार्थ हैं, जो (उत्पन्न सृष्टि से) पहले से विद्यमान् है, इस उत्पन्न जगत् का एकमात्र स्वामी है। उसने पृथ्वी को और इस द्युलोक को धारण किया है, हम उस सुखस्वरूप प्रभु की श्रद्धा भक्ति से स्तुति करते हैं ॥ ५६ ॥

* * *

य आत्मदा बलदा यस्य विश्व उपासते प्रशिषं यस्य देवाः। यस्यच्छायाऽमृतं यस्य मृत्युः कस्मै देवाय हविषा विधेम ॥

ऋ० १०।१२१।२

---*---

जो परमात्मा आत्मिक और शारीरिक बल का देने वाला है, जिसके शासन की सब विद्वान् प्रशंसा करते हैं, जिसका आश्रय अमृत (मोक्ष) और जिससे विमुख होना मृत्यु है, हम उस सुखस्वरूप प्रभु की श्रद्धा भक्ति से स्तुति करते हैं ॥ ५७ ॥

* * *

य: प्राणतो निमिषतो महित्वैक इद्राजा जगतो बभूव । य ईशे अस्य द्विपदश्चतुष्पद: कस्मै देवाय हविषा विधेम ॥

ऋ० १०।१२१।३

—*— ·

जो अपनी महिमा से श्वास लेने वाले और आँख झपकने वाले जगत् (प्राणियों) का एक मात्र राजा है, जो इस जगत् के दो पैर वालों और चार पैर वालों का शासक है, हम उस सुखस्वरूप प्रभु की श्रद्धा भक्ति से स्तुति करते हैं ॥ ५८ ॥

*  *  *

यस्येमे हिमवन्तो महित्वा यस्य समुद्रं रसया सहाहुः । यस्येमाः प्रदिशो यस्य बाहू कस्मै देवाय हविषा विधेम ॥

ऋ० १०।१२१।४

---

जिसकी महिमा यह बर्फ़ से ढके हुए पहाड़, जिसकी महिमा यह नदियों के सहित समुद्र, जिसकी महिमा यह बाहू के समान दिशाएँ और उपदिशाएँ वर्णन करती हैं, हम उस सुखस्वरूप प्रभु की श्रद्धा भक्ति से स्तुति करते हैं ॥ ५६ ॥

* * *

येन द्यौरुग्रा पृथिवी च दृढा येन स्वः स्तभितं येन नाकः । योऽन्तरिक्षे रजसो विमानः कस्मै देवाय हविषा विधेम ॥

ऋ० १०।१२१।५

---

जिसने द्यु लोक को ऊपर उठा रक्खा और पृथ्वी को दृढ़ बना रक्खा है, जिसने सुख को और दुःख रहित मोक्ष को धारण किया है, जो अन्तरिक्ष में लोक लोकान्तरों का निर्माण करने वाला है, हम उस सुखस्वरूप प्रभु की श्रद्धा भक्ति से स्तुति करते हैं ॥ ६० ॥

* * *

यं क्रन्दसी अवसा तस्तभाने अभ्यैक्षेतां मनसा रेजमाने । यत्राधि-सूर उदितो विभाति कस्मै देवाय हविषा विधेम ॥

ऋ० १०।१२१।६

—※—

जिसकी रक्षा शक्ति से ( अपने स्थान में ) ठहरे हुए और जिसकी इच्छा शक्ति से ( अपनी कक्षाओं में ) भ्रमण करते हुए पृथ्वी और द्युलोक ( नक्षत्रादि ) (मानो) काँपते हुए मन से जिसकी ओर देखते हैं, हम उस सुखस्वरूप प्रभु की श्रद्धा भक्ति से स्तुति करते हैं ॥ ६१ ॥

※ ※ ※

मो नो हिंसीज्जनिता यः पृथिव्या यो वा दिवं सत्यधर्मा जजान ।
यश्चापश्चन्द्रा बृहतीर्जजान कस्मै देवाय हविषा विधेम ॥

ऋ० १०।१२१।६

———*———

जो पृथ्वी का उत्पन्न करने वाला है, जिस सत्यनियम वाले ने द्युलोक को उत्पन्न किया है, जिसने चमकने वाली बड़ी (आपः) जल राशि को उत्पन्न किया है, हम उस सुखस्वरूप प्रभु की श्रद्धा भक्ति से स्तुति करते हैं ॥ ६२ ॥

* * *

प्रजापते न त्वदेतान्यन्यो विश्वा जातानि परिता बभूव । यत्कामास्ते जुहुमस्तन्नो अस्तु वयं स्याम पतयो रयीणाम ॥

ऋ० १०।१२१।१०

—*—

हे उत्पन्न जगत् के स्वामिन्! तेरे अतिरिक्त कोई दूसरा सारे उत्पन्न पदार्थों को चारों ओर से घेरने वाला (शासक) नहीं है। जिन कामना करने योग्य वस्तुओं के लिए हम तेरी आराधना करते हैं वह हमारी हों, हम सब प्रकार के धनों के स्वामी हों ॥ ६३ ॥

* * *

यतः सूर्य उदेत्यस्तं यत्र च गच्छति। तदेव मन्येऽहं ज्येष्ठं तदु नात्येति किंचन ॥

अथर्व १०।८।१६

—*—

जिससे सूर्य उत्पन्न होता और जिस में प्रलय को प्राप्त होता है, मैं उसी (परमेश्वर) को सबसे बड़ा मानता हूँ, उसको पार ( अतिक्रमण ) करके कोई नहीं जा सकता है ॥ ६४ ॥

* * *

## अथ नमस्कारप्रकरणम्

यो भूतञ्च भव्यञ्च सर्वं यश्चाधितिष्ठति । स्वर्यस्य च केवलं तस्मै ज्येष्ठाय ब्रह्मणे नमः ॥

अथर्व० १०।८।१

---

जो सब भूत और भविष्यत् और (वर्त्तमान) के ऊपर शासन करता है, जिसका स्वरूप केवल सुख है, उस सब से बड़े ब्रह्म को नमस्कार हो ॥६५॥

*  *  *

५

यस्य भूमिः प्रामान्तरिक्षमुतो-
दरम् । दिवं यश्चक्रे मूर्द्धानं तस्मै
ज्येष्ठाय ब्रह्मणे नमः ॥

अथर्व० १०।७।३२

—※—

जिसकी भूमि पैर और अन्तरिक्ष पेट ( के समान ) है, जिसने द्युलोक को सिर ( के समान ) बनाया है, उस सब से बड़े ब्रह्म को नमस्कार हो ॥६६॥

※ ※ ※

यस्य सूर्यश्चक्षुश्चन्द्रमाश्च
पुनर्णवः । अग्निं यश्चक्र आस्यं
तस्मै ज्येष्ठाय ब्रह्मणे नमः ॥

अथर्व० १०।७।३३

—*—
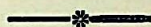
सूर्य और वार वार नया होने वाला चाँद जिसकी आँखों ( के समान ) हैं, जिसने आग को मुख ( के समान ) बनाया है, उस सब से बड़े ब्रह्म को नमस्कार हो ॥६७॥

* * *

यस्य वातः प्राणापानौ चक्षु-
रङ्गिरसोऽभवन् । दिशो यश्चक्रे प्रज्ञा-
नीस्तस्मै ज्येष्ठाय ब्रह्मणे नमः ॥

अथर्व० १०।७।३४

——*——

वायु जिसका प्राण अपान ( श्वास निश्वास ) है, प्रकाश की किरणें जिस की आंख ( के समान ) हुईं, जिसने दिशाओं को व्यवहार का साधन करने वाली बनाया है, उस सबसे बड़े ब्रह्म को नमस्कार हो ॥६८॥

* * *

यः श्रमात्तपसो जातो लोका-न्त्सर्वान्त्समानशे। सोमं यश्चक्रे केवलं तस्मै ज्येष्ठाय ब्रह्मणे नमः ॥

अथर्व० १०।७।३६

—*—

जो ( विचार, ईक्षणरूपी ) श्रम और तप से (सृष्टि उत्पन्न कर के) प्रकट हुआ, जो सारे लोकों में व्याप्त है, जिस ने केवल आनन्द को अपना स्वरूप बनाया है, उस सब से बड़े ब्रह्म को नमस्कार हो ॥६९॥

* * *

यो देवेभ्य आतपति यो देवानां पुरोहितः । पूर्वो यो देवेभ्यो जातः नमो रुचाय ब्राह्मये ॥

यजुः० ३१।२०

——*——

जो देवों (दिव्यगुणयुक्त पदार्थों) को तपाता (प्रकाशित वा शासित करता) है, जो देवों का नेता है, जो देवों से पहले विद्यमान था, उस प्रकाश-स्वरूप ब्रह्म को नमस्कार हो ॥७०॥

* * *

नमः सायं नमः प्रातर्नमो रात्र्या नमो दिवा। भवाय च शर्वाय च उभाभ्यामकरं नमः ॥

अथर्व० ११।२।१६

---

सायङ्काल नमस्कार हो, प्रातःकाल नमस्कार हो, रात्रि में नमस्कार हो, दिन में नमस्कार हो, मैं जगत् के उत्पन्न और प्रलय करने वाले परमेश्वर को दोनों (हाथों) से नमस्कार करता हूँ ॥७१॥

* * *

नमः शंभवाय च मयो भवाय च नमः शङ्कराय च मयस्कराय च नमः शिवाय च शिवतराय च ॥

यजुः० १६।४१

---

सांसारिक सुख देने वाले और मोक्ष के आनन्ददाता परमेश्वर को नमस्कार हो, कल्याणकर्त्ता और परमानन्ददाता प्रभु को नमस्कार हो, कल्याणस्वरूप और परम मंगलमय परमात्मा को नमस्कार हो ॥७२॥

* * *

## अथेश्वरोपदेशप्रकरणम्

---*---

अहं भुवं वसुनः पूर्व्यस्पतिरहं धनानि सं जयामि शश्वतः। मां ह्वन्ते पितरं न जन्तवोऽहं दाशुषे विभजामि भोजनम् ॥

ऋ० १०।४८।१

---*---

परमेश्वर कहता है:—"मैं सब प्रकार के धनों का सबसे पहला स्वामी हूं, मैंने ही सब प्रकार के धनों को सनातन से वश में किया हुआ है, सब जीव मुझे ही पिता की नाईं पुकारते हैं, मैं दान देने वाले को भोगने योग्य वस्तुएं देता हूँ" ॥७३॥

मया सोऽन्नमत्ति यो विपश्यति
यः प्राणिति य ईं शृणोत्युक्तम् ।
अमन्तवो मां त उप क्षियन्ति श्रुधि
श्रुतः श्रद्धिवं ते वदामि ॥

ऋ० १०।१२५।४

—*—

मेरे ( मुझ परमेश्वर के ) देने से हो वह अन्न खाता है जो देखता है, साँस लेता है और बोले हुए ( शब्द ) को सुनता है । जो लोग मुझे नहीं मानते वह हीन गति को प्राप्त होते हैं, (हे मनुष्य !) मैं तुझसे यह सत्य वचन कहता हूँ, तू इसे सुन ॥ ७४ ॥

* * *

अहमेव स्वयमिदं वदामि जुष्टं देवेभरुत मानुषेभिः । यं कामये तं तमुग्रं कृणोमि तं ब्रह्माणं तमृषिं तं सुमेधाम् ॥

ऋ० १०।१२५।५

—-*—-

मैं ( परमेश्वर ) स्वयं यह प्रिय वचन विद्वानों और ( अन्य ) मनुष्यों से कहता हूं कि जो मेरा प्रेमपात्र बनता है मैं उसे बलवान्, उसे ब्राह्मण, उसे ऋषि, उसे उत्तम बुद्धि वाला बनाता हूं ॥ ७५ ॥

* * *

अहं रुद्राय धनुरातनोमि ब्रह्म-द्विषे शरवे हन्तवा उ। अहं जनाय समदं कृणोम्यहं द्यावापृथिवी आ विवेश ॥

ऋ० १०।१२५।६

—※—

मैं विद्वानों, ज्ञानियों से द्वेष करने वाले, उन्हें रुलाने वाले (कष्ट देने वाले), उन पर तीर चलाने वाले तथा मारने वाले पर धनुष को खींचता हूँ (उसे दंड देता हूं)। मैं मनुष्यों के लिए सुख-सामग्री उत्पन्न करता हूँ, मैं द्यु लोक और पृथ्वी के भीतर पैठा हुआ (व्याप्त) हूं ॥ ७६ ॥

मृत्योः पदं योपयन्तो यदैत
द्राघीय आयुः प्रतरं दधानाः ।
आप्यायमानाः प्रजया धनेन शुद्धाः
पूता भवत यज्ञियासः ॥

ऋ० १०।१८।२

---*---

जो मनुष्य मौत के मार्ग ( दुराचार, ईश्वर की आज्ञा का उल्लंघन ) को मिटाते हुए चलते हैं वह दीर्घ और उत्तम आयु को धारण करते हैं, सन्तान से और धन से परिपूर्ण होते हैं। हे यज्ञ करने वाले मनुष्यो ! तुम शारीरिक और मानसिक पवित्रता प्राप्त करो, ॥७७॥

* * *

आ रोहतायुर्जरसं वृणाना अनुपूर्वं यतमाना यतिष्ठ । इह त्वष्टा सुजनिमा सजोषा दीर्घमायुः करति जीवसे वः ॥

ऋ० १०।१८।६

—*—

हे मनुष्यो ! क्रम पूर्वक यत्न करते हुए पूर्ण आयु और वृद्धावस्था को प्राप्त करो, जगत् का रचने वाला, उत्तम जन्म और उत्तम पदार्थों का देने वाला परमेश्वर इस संसार में जीवित रहने के लिए तुम्हें दीर्घ आयु प्रदान करता है ॥ ७८ ॥

* * *

एष वा अतिथिर्यच्छ्रोत्रियस्त-
स्मात्पूर्वो नाश्नीयात् ॥

अथर्व० ६।६।३।७

—*—

यह वेदज्ञ अतिथि है, इस लिए इससे पहले (गृहस्थ) भोजन न करे ॥७६॥

* * *

अशितावत्यतिथावश्नीयाद् यज्ञस्य सात्मत्वाय यज्ञस्याविच्छेदाय तद् व्रतम् ॥

अथर्व० ९।६।३।८

—*—

अतिथि यज्ञ को जीवित और निरन्तर जारी रखने के लिए यह व्रत है कि अतिथि के भोजन कर लेने पर ही ( गृहस्थ ) भोजन करे ॥ ८० ॥

* * *

मोघमन्नं विन्दते अप्रचेताः सत्यं ब्रवीमि वध इत्स तस्य । नार्यमणं पुष्यति नो सखायं केवलाघो भवति केवलादी ॥

ऋ० १०।११७।६

——*——

मैं सत्य कहता हूं कि वह मूर्ख व्यर्थ ही अन्न प्राप्त करता है जो न प्रियजन को, न अतिथि को, न मित्रों को खिलाकर पुष्ट करता है, वह ( अन्न ) उसका नाश कर देता है, वह इकलखोरा निरा पाप-( पुञ्ज ) होता है ॥ ८१ ॥

* * *

य आध्राय चकमानाय पित्वोऽ-
न्नवान्त्सन्नाफितायोपजग्मुषे। स्थिरं
मनः कृणुते सेवते पुरोतोचित्स मर्डि-
तारं न विन्दते ॥

ऋ० १०।११७।२

---*---

जो अन्न वाला होते हुए ऐसे दीन भिखारी के विरुद्ध अपना हृदय कड़ा कर लेता है जो उसके पास अन्न माँगने आता है, ऐसा मनुष्य किसी को अपना उपकार करने वाला नहीं पाता ॥८२॥

* * *

न स सखा यो न ददाति सख्ये सचाभुवे सचमानाय पित्वः । अपास्मात्प्रेयान्न तदोको अस्ति पृणन्तमन्यमरणं चिदिच्छेत् ॥

ऋ० १०।११७।४

—※—

वह मित्र नहीं है जो अपने मित्र और साथी को, जो अन्न माँगने आता है, नहीं देता। वह (यह कहता हुआ) कि यहाँ आश्रय का स्थान नहीं है उसके पास से चला जाता है और अन्य (ग़ैर) का आश्रय चाहता है* ॥ ८३ ॥

* अर्थात् अपने से पराया हो जाता है।

* * *

अहं भूमिमददामार्यायाहं वृष्टिं दाशुषे मर्त्याय । अहमपो अनयं वावशाना मम देवासो अनु केतमायन् ॥

ऋ० ४।२६।२

—※—

मैंने ( मुझ परमेश्वर ने ) श्रेष्ठ पुरुषों को भूमि दी है, मैं दान देने वाले मनुष्य के लिए ( धन तथा सुख की ) वर्षा करता हूं। मैं बार बार शब्द करने वाले जलों ( नदियों ) को लाया हूँ, विद्वान् लोग मेरे ज्ञान के अनुसार चलते हैं ॥ ८४ ॥

* * *

समिधा अग्निं दुवस्यत घृतैर्बो-धयतातिथिम् । आस्मिन्हव्याजुहो-तन ॥

ऋ० ८।४४।१

—*—

हे गृहस्थो ! समिधाओं से (हवन की) अग्नि को जलाओ, अतिथि के समान घृत से जगाओ ( पुष्ट करो ) इस में होम करने योग्य पदार्थों की आहुति दो ॥८४॥

* * *

यथा सिन्धुर्नदीनां साम्राज्यं सुषुवे वृषा । एवा त्वं सम्राज्ञ्येधि पत्युरस्तं परेत्य ॥

अथर्व० १४।१।४३

—————*—————

जैसे वर्षा करने वाला समुद्र नदियों के ऊपर साम्राज्य प्राप्त करता है, ऐसे ही हे वधू ! तू पति के घर जाकर सम्राज्ञी (महाराणी) बन ॥ ८६ ॥

*   *   *

सम्राज्ञी श्वशुरे भव सम्राज्ञीश्वश्र्वां भव। ननान्दरि सम्राज्ञी भव सम्राज्ञी अधि देवृषु ॥

ऋ० १०।८५।४६

——*——

हे वधू! तू ससुर के लिए महाराणी (सम्मान का पात्र) हो, सास के लिए महाराणी हो, ननदों के लिए महाराणी हो और देवरों के लिए महाराणी हो ॥८७॥

* * *

इहैव स्तं स्मां वियौष्टं विश्वमायु-
र्व्यश्नुतम् । क्रीडन्तौ पुत्रैर्नप्तृभिर्मोद-
मानौ स्वे गृहे ॥

ऋ० १०।८५।४२

---

( हे दम्पती ! ) तुम दोनों यहाँ इकट्ठे ही रहो, एक दूसरे से मत बिछुड़ो, अपने घर में पुत्रों पौत्रों से खेलते हुए, आनन्द करते हुए पूरी आयु भोगो ॥८८॥

* * *

अक्षैर्मा दीव्यः कृषिमित्कृषस्व वित्ते रमस्व वहु मन्यमानः। तत्र गावः कितव तत्र जाया तन्मे वि चष्टे सवितायमर्यः॥

ऋ० १०।३४।१३

—※—

हे जुआरी! पाँसों से (जुआ) मत खेल, खेतों में खेती कर, (खेती से प्राप्त) धन को वहुत समझता हुआ उसीको भोग। वहाँ (तेरे घर में) गौए हैं, वहाँ तेरी पत्नी है, यह मुझ (उपदेशक) द्वारा सबका स्वामी जगदुत्पादक परमेश्वर कहता है॥ ८९॥

※ ※ ※

न ता नशन्ति न दभाति तस्करो
नासाममित्रो व्यथिरा दधर्षति ।
देवांश्च याभिर्यजते ददाति च ज्यो-
गित्ताभिः सचते गोपतिः सह ॥

ऋ० ६।२८।३

—※—

गौएँ नष्ट न हों, उन्हें चोर न चुरावे, उन्हें शत्रु कष्ट न दे, उनसे विद्वानों का पूजन होता है, वह दान में दी जाती हैं, उनसे युक्त होकर गौओं का स्वामी दीर्घ-काल तक सुख भोगता है ॥९०॥

* * *

सङ्गच्छध्वं संवदध्वं सं वो मनांसि जानताम् । देवा भागं यथा पूर्वे सञ्जानाना उपासते ॥

ऋ० १०।१९१।२

---

हे मनुष्यो ! मिलकर चलो, मिलकर बोलो, तुम्हारे मनों के भाव समान हों, जैसे तुम्हारे पूर्वज विद्वान् समान ज्ञान रखते हुए अपना कार्य करते थे (वैसे ही तुम भी करो) ॥९१॥

* * *

समानो मन्त्रः समितिः समानी समानं मनः सह चित्तमेषाम् । समानं मन्त्रमभिमन्त्रये वः समानेन वो हविषा जुहोमि ॥

ऋ० १०।१९१।३

—*—

हे मनुष्यो ! तुम्हारे परामर्श (विचार) समान हों, तुम्हारी सभा एक हो, तुम्हारे मन और चित्त एक से हों। मैं तुम्हें एक जैसा उपदेश करता हूँ, मैं तुम्हें सब श्रेष्ठ कार्य ( यज्ञ आदि ) मिलकर करने का आदेश करता हूँ ॥९२॥

* * *

समानी व आकूतिः समाना हृदयानि वः। समानमस्तु वो मनो यथा वः सुसहासति ॥

ऋ० १०।१९१।४

—※—

हे मनुष्यो! तुम्हारे सङ्कल्प (इरादे) समान हों, तुम्हारे हृदय एक हों। तुम्हारे मन एक हों जिससे कि तुम प्रसन्नता पूर्वक परस्पर मिले जुले रहो ॥९३॥

* * *

सहृदयं सांमनस्यमविद्वेषं कृणोमि वः । अन्योऽन्यमभि हर्यत वत्सं जातमिवाघ्न्या ॥

अथर्व० ३।३०।१

—※—

हे मनुष्यो ! मैं तुम्हें समान हृदय वाला, समान मन वाला और एक दूसरे से द्वेष न करने वाला रहने का उपदेश करता हूं, जैसे गौ उत्पन्न हुए अपने बच्चे के पास दौड़ी आती है वैसे ही तुम भी एक दूसरे के पास प्रेम से जाओ ।।९४।।

※ ※ ※

अनुव्रतः पितुः पुत्रो माता भवतु संमनाः । जाया पत्ये मधुमतीं वाचं वदतु शान्तिवाम् ॥

अथर्व ३।३०।२

पुत्र पिता का आज्ञाकारी और माता के साथ समान मन रखने वाला हो। पति से पत्नी मीठी और शान्ति देने वाली वाणी बोले ॥९५॥

* * *

मा भ्राता भ्रातरं द्विक्षन्मा
स्वसारमुत स्वसा। सम्यञ्च सव्रता
भूत्वा वाचं वदतु भद्रया ॥

अथर्व० ३।३०।३

———*———

भाई भाई से, बहिन बहिन से, भाई
बहिन से, और बहिन भाई से द्वेष न
करे, एकत्र होकर और एकसा उद्देश्य
रखते हुए कल्याणकारी वाणी बोलें ॥९६॥

* * *

येन देवा न वि यन्ति नो च विद्विषते मिथः। तत्कृण्मो ब्रह्म वो गृहे संज्ञानं पुरुषेभ्यः॥

अथर्व० ३।३०।४

---*---

जिससे विद्वान् लोग औरों से नहीं लड़ते झगड़ते और न आपस में द्वेष करते हैं, जो मनुष्यों को एक विचार वाला बनाता है, मैं उस वेद को तुम्हारे घरों में (स्वाध्याय करने के लिए) स्थापित करता हूँ॥९७॥

* * *

ज्यायस्वन्तश्चित्तिनो मा वि-
यौष्ट संराधयन्तः सधुराश्चरन्तः ।
अन्योऽन्यस्मै वल्गु वदन्त एत सध्री-
चीनान् वः संमनसस्कृणोमि ॥
अथर्व० ३।३०।५

——*——

(गुणों में) बड़े बनते हुए, ज्ञान को बढ़ाते हुए, (एक दूसरे को) प्रसन्न करते हुए, मिलकर कार्य भार उठाते हुए, एक दूसरे से मीठी वाणी बोलते हुए, चलो, मैं तुम्हें आपस में मित्रता करने वाले, मिलकर बैठने वाले और एक मन रखने वाले रहने का उपदेश करता हूँ ॥९८॥

* * *

समानी प्रपा सह वोऽन्नभागः
समाने योक्त्रे सह वो युनज्मि ।
सम्यञ्चोऽग्निं सपर्य्यतारा नाभिमि-
वाभितः ॥

अथर्व० ३।३०।६

———*———

तुम्हारा पानी पीने का स्थान एक हो, अन्न का भोजन साथ साथ हो, मैं तुम्हें साथ साथ एक ही जुवे (बंधन) में जोड़ता हूँ। जिस प्रकार पहिये की नाभि में अरे जुड़े रहते हैं इस प्रकार परस्पर मिलकर अग्नि ( ज्ञान व प्रकाश· स्वरूप परमेश्वर, विद्वान्, ज्ञानी, गुरु और यज्ञाग्नि) की सेवा करो ॥९६॥

सध्रीचीनान् वः संमनसस्कृणो-म्येकश्नुष्टीन्त्संवननेन सर्वान् । देवा इवामृतं रक्षमाणाः सायं प्रातः सौमनसो वो अस्तु ॥

अथर्व० ३।३०।७

—— ※ ——

मैं तुम सबको परस्पर मिलकर बैठने वाले (मित्र) एक मन रखने वाले, एक दूसरे की सहायता करने वाले होने का प्रेम के साथ उपदेश करता हूँ । विद्वानों के समान अमरत्व ( मोक्ष मार्ग) की रक्षा करते हुए तुम सायङ्काल और प्रातःकाल (एक दूसरे के प्रति) अच्छे मन वाले (प्रेम करने वाले) रहो ॥१००॥

नमस्ते भगवन्नस्तु, नमस्ते भगवन्नस्तु ।

शमिति ॥